पद्य 1 कबीरदास

कवि परिचयः-

जन्म : सन् 1398 मृत्यु : सन् 1518

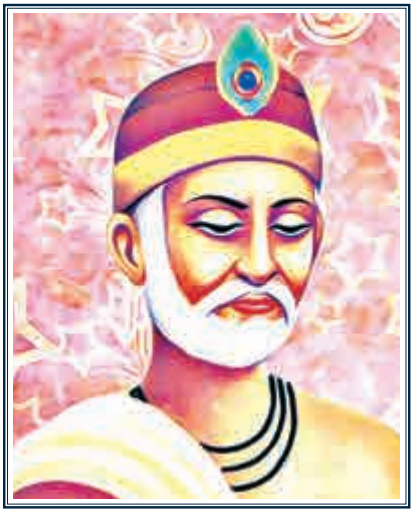

कबीरदास के धर्मपिता का नाम नीरू तथा माता का नाम नीमा था। जाति के वे जुलाहे थे। अपने इस व्यवसाय को वे इतनी अधिक प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखते थे कि मृत्युपर्यंत इसीके द्वारा अपनी आजीविका चलाते रहे। जाति-पाँति की दीवार को तोड़कर सबको अपनी भक्ति-परंपरा में सम्मिलित करनेवाले स्वामी रामानंद के वे शिष्य थे।

उनकी समस्त कृतियाँ तीन भागों में विभक्त हैं– साखी, पदावली (सबद) और रमैनी। 'साखी' में दोहे और कहीं-कहीं एकाध सोरठे भी हैं, जिनमें अनेक उपदेशप्रद बातें कही गयी हैं। 'पदावली' में बाह्याडंबरों के प्रति तीव्र आक्रोश व्यक्त किया गया है तथा ब्रह्म, जीव और माया के रहस्यात्मक वर्णन के साथ भगवत्प्रेम की पराकाष्ठा दिखायी गयी है। 'रमैनी' में हम उनके सिद्धांतों का विशिष्ट रूप पाते हैं। इसमें साखी और पदावली में प्रयुक्त विषयों के सिवाय उपदेश, गुरु और राम-संबंधी भजन तथा योग, सत्संग और कर्तानिर्णय तथा कर्ता के स्वरूप-संबंधी अनेक पद हैं।

उनके काव्य में हृदयपक्ष की प्रधानता है। काव्य-कला की दृष्टि से देखने पर उनके पद्य काव्य की कसौटी पर खरे नहीं उतरते। यहाँ तक कि अनेक दोहे पिंगल के नियमों के प्रतिकूल हैं, पदों का भी यही हाल है। पर भाव, प्रेम और भक्ति की दृष्टि से उनकी कृतियाँ अनुपम हैं। हिन्दी साहित्य में व्यंग्यात्मक शैली के सर्वप्रथम आविष्कर्ता वे ही हैं। उनकी रचनाओं में 'बीजक' मुख्य है।

सीलवन्त सबतें बड़ा, सर्व रतन की खानि।
तीन लोक की संपदा, रही शील में आनि।। 1।।

शब्दार्थः- साखी - कबीरदास आदि संत कवियों के ज्ञान वैराग्य विषयक दोहे आदि; सीलवन्त - शीलवान, सुशील, तें-से; खानि - खान, भंडार, खजाना; संपदा - संपत्ति, दौलत; सील - शील, सदाचार, सद्वृत्ति; आनि - आकर।

शीलवान अर्थात् सच्चरित्र पुरुष ही समस्त मानवों में श्रेष्ठ है। वही सब गुण-रूपी रत्नों का भंडार है; क्योंकि शील, सदाचार या सच्चरित्र में ही तीनों लोकों की सारी संपत्ति आकार बसी हुई है। अब तक संसार में जितने महापुरुष हुए, वे सब शीलवान या सच्चरित्र रहे हैं। शील के अभाव में मनुष्य नहीं कहलाता। 'चरित्र गया तो सब कुछ गया' कथन का भाव भी यही है।

छिमा बड़न को चाहिये, छोटन को उतपात।
कहा विष्णु को घटि गयो, ली भृगु मारी लात।। 2 ।।

शब्दार्थः- छिमा - क्षमा; बड़न को - बड़ों को; छोटन को - छोटों का; उतपात - उत्पात, ऊगम; कहा - मनुष्य कहा ऐसा हुआ कि; घटि गयो - कम हो गया।

क्षमा एक महान गुण है, जो महापुरुषों में रहता है, छोटे अर्थात् समान्य अथवा निम्न प्रवृत्तिवाले लोग उनकी निंदा आदि के द्वारा उनको कष्ट पहुँचाते हैं। लेकिन महापुरुष उनके प्रति क्रोध नहीं करते, बल्कि क्षमा कर देते हैं। इस प्रकार क्षमा कर देने से उस महापुरुष की महत्ता और भी बढ़ जाती है। इस बात के समर्थन में कवि कबीरदास भगवान विष्णु और महर्षि भृगु का दृष्टांत देते हैं। जब महर्षि भृगु ने भगवान विष्णु के वक्ष पर लात मारी, तो भगवान ने महर्षि के उस अपराध को क्षमा कर दिया, जिससे विष्णु की महत्ता त्रिमूर्तियों में बढ़ गयी। वे श्रेष्ठ माने गये।

चाह गयी चिंता मिटी, मनुवाँ बेपरवाह।
जिनको कछू न चाहिए, सोई साहंसाह।। 3 ।।

शब्दार्थः- चाह - इच्छा, तृष्णा; मनुवाँ - मन; बेपरवाह - बेफ़िक्र; कछू - कुछ भी; सोई - वही; साहंसाह - चक्रवर्ती, सम्राट, शहनशाह।

मनुष्य को इच्छा ही संसार के अंदर बाँधे रखती है। अगर उसकी इच्छा या तृष्णा मिट जाए, अर्थात् वह तृष्णा रहित हो जाए तो उसे किसी बात की चिंता या फ़िक्र नहीं होगी। तब उसका मन बेफ़िक्र हो जाएगा, स्वच्छंद हो जाएगा, वह बंधन मुक्त हो जाएगा, क्योंकि जिसे किसी बात की आकांक्षा नहीं रहती, वही सर्वोपरि सम्राट है।

जो जल बाढ़ै नाव में, घर में बाढ़ै दाम।
दोऊ हाथ उलीचिये, यह सज्जन कौ काम ।। 4 ।।

शब्दार्थः- बाढ़ै - वृद्धि हो; दाम - द्रव्य, धन; उलीचना - पानी बाहर फेंकना, सत्पात्र को दान देना।

नाव में बैठकर यात्रा करते समय अगर नाव में पानी आ जाए, तो तुरंत दोनों हाथों से बाहर फेंक देना चाहिए, अन्यथा नाव के साथ यात्री भी पानी में डूबकर मर जाएँगे । उसी प्रकार घर में अगर द्रव्य अर्थात् धन अधिक संचित हो जाए, तो उसको सत्पात्र लोगों में वितरित कर देना चाहिए। यही सज्जन का कार्य है, अन्यथा वह लोभी कहलाएगा। लोभी का जीवन इह और पर दोनों दृष्टियों से व्यर्थ हो जाता है। यही उसका डूब जाना है। लोभ को पास फटकने न देना और त्याग को अपनाना - यही सज्जन का एक महान गुण है।

माँगन गये सो मरि रहे, मरे तो माँगन जाहिं
तिनते पहले वे मरे, होत करत जो नाहिं।।5 ।।

शब्दार्थः- माँगन - माँगने; सो - वह; तिनते - उनसे।

कोई व्यक्ति किसी से कुछ माँगने अर्थात् याचना करने जाता है, तो समझना चाहिए कि वह मर गया है, क्योंकि जो मर गया हो, वही माँगने जाता है। लेकिन इन माँगनेवालों से पहले उनको मृत समझना चाहिए, जो उसको कुछ देने से इनकार करते हैं।